IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

"प्राचीन भारतीय शिक्षा में डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी का दृष्टिकोण"

1. डॉ हरि चरण अहिरवार

(सहा प्रा, राजनीति विज्ञान)

शासकीय महाविद्यालय बैकुंठपुर रीवा (म.प्र.)

2. बुलेन्दर सिंह

(शोधार्थी- राजनीति विज्ञान)

अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा म.प्र.)

सारांश:-

यह शोध-लेख प्राचीन भारतीय शिक्षा-पद्धति—उसके उद्देश्यों, संस्थागत ढांचे, पाठ्य-विषयों, ज्ञान-मीमांसा और सामाजिक-सांस्कृतिक प्रभाव—का समग्र अवलोकन करते हुए डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी (1901–1953) के शैक्षिक दृष्टिकोण का तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन का मूल तर्क यह है कि प्राचीन भारतीय शिक्षा का केन्द्रीय आदर्श—चरित्र-निर्माण, लोक-कल्याण उन्मुख ज्ञान, मातृभाषा एवं सांस्कृतिक-आत्मगौरव—डॉ. मुखर्जी की शैक्षिक सोच के प्रमुख सूत्रों से अंतर्संबद्ध दिखता है। 1930 के दशक में कलकत्ता विश्वविद्यालय के कुलपति के रूप में तथा स्वतंत्रता-उपरांत अपने सार्वजनिक जीवन में मुखर्जी ने जिन वैचारिक आग्रहों (राष्ट्रीय चेतना-संलग्न शिक्षा, विज्ञान-प्रौद्योगिकी और भारतीय भाषाओं का समन्वय, सांस्कृतिक निरन्तरता, औद्योगिक-तकनीकी कौशल) पर बल दिया, वे प्राचीन परंपरा के कुछ स्थायी मूल्य-आदर्शों के आधुनिक पुनर्पाठ के रूप में समझे जा सकते हैं। लेख का निष्कर्ष है कि भारत की शिक्षा-दिशा के प्रश्न पर मुखर्जी का दृष्टिकोण परंपरा और आधुनिकता के एक संयोजनवादी (synthesis) ढांचे को निरूपित करता है—जहाँ ज्ञान का अंतिम उद्देश्य स्व-उत्कर्ष के साथ समाज-राष्ट्र की उन्नति है।

कुंजीशब्द: प्राचीन भारतीय शिक्षा, गुरुकुल, बौद्ध-विहार, मातृभाषा, चरित्र-निर्माण, राष्ट्रीय शिक्षा।

1. भूमिका

भारतीय सभ्यता के इतिहास में शिक्षा केवल ज्ञान-प्राप्ति का साधन नहीं, बल्कि जीवन-दर्शन, नैतिकता और सामाजिक-समरसता की निर्माण-प्रक्रिया रही है। वैदिक काल के गुरुकुलों से लेकर बौद्ध-विहारों और मध्यकालीन परंपराओं तक, शिक्षा का स्वरूप समयानुरूप बदलता रहा; परन्तु उसका आत्मगत उद्देश्य—व्यक्ति और समाज का समन्वित विकास—काफी स्थिर रहा। आधुनिक भारत के चिंतकों में डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी का नाम उन व्यक्तित्वों में आता है जिन्होंने औपनिवेशिक शिक्षा-नीति की सीमाओं की आलोचना करते हुए शिक्षा-केंद्रित राष्ट्रीय पुनरुत्थान का आग्रह किया। प्राचीन भारतीय शिक्षा के आदर्शों और मुखर्जी के

शैक्षिक विवेक का समान्तर अध्ययन इस कारण भी महत्त्वपूर्ण है कि इससे भारत की समकालीन शिक्षा-नीति के लिए दीर्घकालिक दिशा-सूत्र निकलते हैं—विशेषकर, "ज्ञान का भारतीय बोध" और "वैश्विक प्रतिस्पर्धा" के बीच संतुलन खोजने में।

2. प्राचीन भारतीय शिक्षा की मूल अवधारणा-

2.1 शिक्षा का उद्देश्य: धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का संतुलन

प्राचीन भारत में शिक्षा का लक्ष्य केवल पेशागत दक्षता नहीं था। *धर्मार्थकाममोक्षाणाम्* के समन्वय द्वारा व्यक्ति को सम्यक् जीवन के लिए तैयार करना, बुद्धि-विवेक का विकास करना, और लौकिक-आध्यात्मिक उन्नति को साथ-साथ ले चलना इसका व्यापक लक्ष्य था। नैतिक अनुशासन (यम-नियम), आत्मसंयम, सत्य, अहिंसा, दान, सेवा और लोकहित प्रमुख मूल्य थे। यह आदर्श बौद्ध परंपरा में *शील–समाधि–प्रज्ञा* के त्रय से और जैन परंपरा में *रत्नत्रय* (सम्यक् दर्शन, ज्ञान, चरित्र) से भी पुष्ट होता है।

2.2 पाठ्य-विषय और व्यावहारिकता

वेद-वेदांग, व्याकरण, दर्शन, छंद, निरुक्त, ज्योतिष, गणित, आयुर्वेद, वास्तु, शिल्प, धनुर्वेद, संगीत–नृत्य–कला, कृषि, पशुपालन, नौपरिवहन इत्यादि विषय पढ़ाए जाते थे। तक्षशिला और नालंदा में चिकित्सा, शल्य, गणित, खगोल, तर्क-शास्त्र, बौद्ध-दर्शन, व्याकरण, और राज्य-शास्त्र का समृद्ध पाठ्यक्रम था। यह विविधता बताती है कि शिक्षा व्यवहार-सापेक्ष और बहु-विषयी थी।

3. संस्थागत ढांचा: गुरुकुल से नालंदा तक

3.1 गुरुकुल और आचार्य-शिष्य संबंध

गुरुकुल प्रणाली में शिक्षा–जीवन–अनुशासन एकरस थे। *गुरु* के सान्निध्य में रहकर शिष्य *सेवा–स्वाध्याय–अभ्यास* के माध्यम से सीखता था। शिक्षा का मूल्य-आधार चरित्रगठन था—नियमितता, सरलता, संयम और गुरु-आज्ञा का पालन। *समावर्तन* (पाठ-समाप्ति) के साथ छात्र समाज-जीवन में उतरते—ज्ञान के सामाजिक दायित्व को निभाने के लिए।

3.2 बौद्ध-विहार और विश्वविद्यालयीय परंपरा

बौद्ध विहारों में व्यापक आवासीय शिक्षण-पद्धति विकसित हुई। नालंदा (5वीं–12वीं सदी), विक्रमशिला, वल्लभी, ओदन्तपुरी आदि में हज़ारों भिक्षु–छात्र, बहुभाषी पांडुलिपियाँ, और विशद पाठ्य-विन्यास रहे—जिन्होंने एशियाई बौद्ध जगत को गहरा प्रभाव दिया। तक्षशिला (पूर्व-ख्री.पू. परंपरा) में भी विविध विषयों का उच्च अध्ययन प्रसिद्ध था। प्रवेश परीक्षाएँ, वाद–विवाद, और शोधोन्मुख अध्ययन—ये सभी आधुनिक विश्वविद्यालय के कई गुणसूत्रों की याद दिलाते हैं।

4. डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी: संक्षिप्त बौद्धिक–शैक्षिक परिचय

डॉ. मुखर्जी 1930 के दशक में कलकत्ता विश्वविद्यालय के कुलपति बने—युवा आयु में इतने बड़े विश्वविद्यालय का दायित्व सम्भालना अपने आप में उनकी शैक्षिक-प्रशासनिक क्षमता का प्रमाण है। वकालत और सार्वजनिक जीवन से जुड़े रहते हुए उन्होंने शिक्षा के सांस्कृतिक–राष्ट्रीय आयामों पर लगातार लिखा–बोला। स्वतंत्रता के बाद वे केन्द्रीय सरकार में शामिल हुए और औद्योगिक–आर्थिक नीतियों के साथ-साथ शिक्षा—विशेषकर तकनीकी–व्यावसायिक शिक्षा, भारतीय भाषाओं, और सांस्कृतिक

एकात्मता—पर भी अपना दृष्टिकोण सार्वजनिक मंचों पर व्यक्त करते रहे। उनकी शिक्षा-चिन्ता दो स्तरों पर दिखती है: (क) बौद्धिक–मूल्यगत—जहाँ शिक्षा का ध्येय व्यक्ति–राष्ट्र का समन्वित उत्थान है; (ख) नीतिगत–संस्थागत—जहाँ विश्वविद्यालयों की स्वायत्तता, पाठ्यचर्या का भारतीयकरण, विज्ञान–प्रौद्योगिकी और कौशल का विस्तार, तथा मातृभाषा–आधारित सशक्त शिक्षण पर बल है।

5. मुखर्जी की शैक्षिक दृष्टि: प्रमुख सूत्र

मातृभाषा और भारतीय भाषाएँ, चरित्र-निर्माण और नागरिकत्व, विज्ञान–तकनीक और उद्योग, विश्वविद्यालयी स्वायत्तता और उत्कृष्टता।

6. प्राचीन आदर्श और मुखर्जी का आधुनिक पुनर्पाठ: एक तुलनात्मक रेखांकन

6.1 उद्देश्य-समानता- प्राचीन शिक्षा का उद्देश्य—व्यक्ति के आंतरिक संस्कार के साथ समाज–राष्ट्र का कल्याण—मुखर्जी की परिकल्पना में नागरिक–राष्ट्रनिर्माण की भाषा में लौटता है। अंतर यह है कि आधुनिक राष्ट्र-राज्य में यह उद्देश्य संवैधानिक–लोकतांत्रिक मूल्यों से जुड़ता है; किंतु मूल्य-आधार (धर्म/नीतिक, लोकहित, परस्पर सहयोग) की अंतर्धारा समान है।

6.2 माध्यम और भाषा- गुरुकुल–विहार की शिक्षा स्थानीय भाषागत संसार में घटित होती थी; मुखर्जी के लिए मातृभाषा–आधारित शिक्षा इसी परंपरा का आधुनिक रूप है। विदेशी भाषा-संचालित शिक्षण—जिसे औपनिवेशिक काल में बढ़ावा मिला—वे इसे आवश्यक कौशल के रूप में देखते, परन्तु ज्ञान की जड़ें भारतीय भाषाओं में ही देखना चाहते थे।

6.4 संस्थागत संस्कृति- विवाद–विमर्श, वाद–संवाद, तर्क–शास्त्र प्राचीन शिक्षा की विधियाँ थीं। मुखर्जी विश्वविद्यालयीय संस्कृति में आलोचनात्मक चिंतन, वैचारिक विविधता और बौद्धिक अनुशासन की पक्षधरता करते हैं—यह नालंदा–तक्षशिला की बहस-परंपरा की स्मृति है।

7. नीतिगत निहितार्थ: आज के लिए क्या सीखा जाए

1. **मातृभाषा–प्रधान बहुभाषिक मॉडल:** प्रारंभिक–मध्य शिक्षा मातृभाषा में; साथ में दूसरी–तीसरी भाषा के रूप में हिन्दी/अंग्रेज़ी/क्षेत्रीय/विदेशी भाषाओं का प्रगतिशील समावेश। यह सीखने की मनोवैज्ञानिक सहजता और ज्ञान की गहराई दोनों बढ़ाता है।
2. **चरित्र–नागरिकता शिक्षा:** पाठ्यचर्या में नैतिक तर्क, संवैधानिक मूल्यों, समुदाय-सेवा, नेतृत्व, और पर्यावरणीय जिम्मेदारियों पर क्रियात्मक मॉड्यूल।
3. **विज्ञान–तकनीक–कौशल का विस्तार:** विद्यालय से विश्वविद्यालय तक प्रयोगशालाएँ, मेकर-स्पेस, इंटर्नशिप, अप्रेंटिसशिप, उद्योग–अकादमिक साझेदारी।

4. **भारतीय ज्ञान-परंपरा का समावेशन:** दर्शन, आयुर्वेद–योग, भाषा–व्याकरण–छंद, नाट्य–संगीत–शिल्प, गणित/खगोल की ऐतिहासिक उपलब्धियाँ—पर आलोचनात्मक दृष्टि के साथ, ताकि अंध-गौरव और तथ्यान्वेषी विज्ञान का संतुलन बने।
5. **विश्वविद्यालयीय स्वायत्तता और उत्तरदायित्व:** अनुसंधान-वित्त, अंतःविषय केन्द्र, अंतरराष्ट्रीय सहयोग; साथ ही सामाजिक उत्तरदायित्व और सीखने के परिणाम (learning outcomes) का पारदर्शी आकलन।
6. **समावेशन–न्याय:** लैंगिक समानता, सामाजिक–आर्थिक पिछड़े तबकों के लिए छात्रवृत्ति–सहायता, विकलांगता-अनुकूल अधिगम। प्राचीन सीमाओं से सीख लेकर आधुनिक समावेशिता को मजबूत करना।

ये नीतिगत सूत्र प्राचीन शिक्षा के मूल्यों और मुखर्जी के आग्रह—भाषा–संस्कृति–विज्ञान के समन्वय—को व्यावहारिक ढंग से वर्तमान परिदृश्य में लागू करते हैं।

निष्कर्ष:-

प्राचीन भारतीय शिक्षा ने जिस "जीवन–समाज–धर्म/नीतिक" के समन्वित आदर्श को पोषित किया, डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने उसी को 20वीं सदी की आवश्यकताओं—राष्ट्रनिर्माण, औद्योगिकीकरण, और वैश्विक आधुनिकता—के अनुरूप पुनर्परिभाषित किया। उनकी शैक्षिक सोच का केन्द्र है—मातृभाषा–भारतीय भाषाएँ, सांस्कृतिक आत्मबोध, चरित्र–नागरिकता शिक्षा, और विज्ञान–तकनीक–कौशल का शक्तिशाली विस्तार। यह समन्वयवादी दृष्टि न तो अतीत का अनक्रिटिकल उत्सव है, न ही वर्तमान का आत्मविमुख अनुकरण; बल्कि दोनों की *श्रेष्ठताओं* का संयोजन है। यदि आज की शिक्षा-नीति इस त्रिवेणी—**भारतीय मूल्य–बहुभाषिकता–विज्ञान/तकनीक**—को संस्थागत रूप दे, तो भारत एक ऐसा ज्ञान–समाज गढ़ सकता है जो अपनी जड़ों से पोषित होकर विश्व–स्तर की रचनात्मकता, नवाचार और मानवीयता का केन्द्र बने।

संदर्भ सूची-

1. आल्टेकर, ए. एस. प्राचीन भारत में शिक्षा. वाराणसी: नंद किशोर एंड ब्रदर्स।
2. बशाम, ए. एल. भारत की अद्भुत गाथा. लंदन: सिडग्विक एंड जैक्सन।
3. धरमपाल. द ब्यूटीफुल ट्री: अठारहवीं शताब्दी में स्वदेशी भारतीय शिक्षा. नई दिल्ली।
4. घोष, सुरेश चंद्र. आधुनिक भारत में शिक्षा का इतिहास: 1757–2012. नई दिल्ली।
5. राधाकृष्णन आयोग (विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग). प्रतिवेदन (1948–49). भारत सरकार।
6. कोठारी आयोग (शिक्षा आयोग). प्रतिवेदन (1964–66): शिक्षा और राष्ट्रीय विकास. भारत सरकार।
7. थापर, रोमिला. प्रारंभिक भारत: उद्गम से 1300 ईस्वी तक. नई दिल्ली।
8. सिंह, उपेंद्र. प्राचीन और प्रारंभिक मध्यकालीन भारत का इतिहास. नोएडा।